ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-5* Issue-7* September- 2020
Innovation The Research Concept

शंकराचार्य के दर्शन में ब्रह्म का स्वरूप तथा मोक्ष प्राप्ति की अवधारणा

In Shankaracharya's Philosophy, The Form of Brahma and The Concept of Salvation

Paper Submission: 13/09/2020, Date of Acceptance: 25/09/2020, Date of Publication: 26/09/2020

पूनम सिंह
शोध छात्रा,
दर्शन शास्त्र विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
प्रयागराज, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

भारतीय परम्परा में ब्रह्म के स्वरूप के विषय में भिन्न–भिन्न मत व्यक्त किये गये हैं। चार्वाक दर्शन जो कि नास्तिक की श्रेणी में आता है। इसमें ब्रह्म और आत्मा जैसी सत्ता का निराकरण कर भौतिक शरीर को तथा मोक्ष जैसी अवधारणा का निराकरण कर वर्तमान जीवन को ही सत्य माना है। अद्वैत वेदान्त का केन्द्रिय विषय 'ब्रह्म' ही है। अद्वैत वेदान्त में ब्रह्म की सत्ता को सर्वोपरि माना तथा आत्मा और ब्रह्म के ऐक्य को स्वीकार किया। जीव का वास्तविक धेय्य अपने वास्तविक स्वरूप अर्थात् निर्गुण ब्रह्म को जानना तथा मोक्ष प्राप्त करना, जीवन का परम लक्ष्य माना है। शंकराचार्य एकमात्र ब्रह्म को सत्य मानते हैं तथा जीव जगत को मिथ्या मानते हैं। किन्तु प्रश्न उठता है कि यदि जीव मिथ्या है तो जीव मोक्ष कैसे प्राप्त कर सकता है। प्रतिउत्तर में शंकर कहते हैं कि मोक्ष प्राप्त नहीं किया बल्कि यह अप्राप्त की प्राप्ति है। इस शोध पत्र का उद्देश्य शंकराचार्य के दर्शन में ब्रह्म का स्वरूप तथा मोक्ष की अवधारणा को स्पष्ट करना। इस शोध पत्र में शंकर ने आत्मा ब्रह्म के ऐक्य को किस प्रकार स्पष्ट किया है, अपने दार्शनिक मतों के द्वारा स्पष्ट किया है। मोक्ष प्राप्ति के साधन के रूप में ज्ञान मार्ग को अपनाकर ज्ञान के जिन स्तरों का प्रयोग कर मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है, उसे स्पष्ट किया है।

Different views have been expressed in the Indian tradition about the nature of Brahma. Charvak philosophy which falls under the category of atheist. In this, by dismantling the power like Brahma and the soul, the physical body and by dismantling the concept of Moksha, the present life itself is considered to be the truth. The central theme of Advaita Vedanta is 'Brahma'. In Advaita Vedanta, the authority of Brahma was considered paramount and accepted the unity of soul and Brahman. The real goal of an organism is to know its true form, that is, nirgun brahm and to attain salvation, is considered the ultimate goal of life. Shankaracharya considers the only Brahman as true and the living world as false. But the question arises that if the organism is false then how can the organism attain salvation. In response, Shankar says that he has not attained moksha but it is attainment of unmanifest. The purpose of this research paper is to clarify the form of Brahma and the concept of Moksha in Shankaracharya's philosophy. In this research paper, how Shankar has explained the unity of Atma Brahm, through his philosophical views. The level of knowledge that can be attained by adopting the path of knowledge as a means of attaining salvation, has made it clear.

मुख्य शब्द : आत्मा, ब्रह्म, मोक्ष प्राप्ति की अवधारणा।
Spirit, Brahma, The Concept of Salvation.

प्रस्तावना

भारतीय दर्शन में आत्मा तथा पाश्चात्य दर्शन में सोल का प्रयोग व्यक्ति के वास्तविक स्वरूप के लिए दर्शन में प्रारम्भ से किया जाता रहा है। अलग–अलग धर्मों में आत्मा के विषय में भिन्न–भिन्न मत व्यक्त किए गए। प्रारम्भ में दर्शन में यह विवाद का विषय था कि आत्मा का स्वरूप क्या है? आत्मा को शरीरयुक्त समझा जाए या अशरीरयुक्त समझा जाए।

शंकराचार्य की दृष्टि में आत्मा का विचार अन्य भारतीय दार्शनिक सम्प्रदायों के विचारों से भिन्न है। चार्वाक दर्शन भौतिक शरीर को ही आत्मा की संज्ञा देते हैं। योगाचार सम्प्रदाय (बौद्ध दर्शन) क्षणिक विज्ञानों के प्रवाह को

आत्मा कहते हैं। शून्यवादियों ने नित्य आत्मा की सत्ता का निषेध कर शून्यता को ही परम सत् माना है। न्याय वैशोषिक तथा मीमांसकों ने चेतना को आत्मा का आगन्तुक गुण माना है। जबकि जैन दर्शन में चेतना को आत्मा का स्वरूप माना है। सांख्य दर्शन भी आत्मा को चेतन स्वरूप मानता है किन्तु वे चेतना में द्रव्य, गुण, कर्म का भेद स्वीकार नहीं करते हैं। किन्तु शंकराचार्य आत्मा को चेतनस्वरूप मानते हैं।

ह्यूम कहता है कि जब भी मैं अपने अन्दर झाँकता हूँ तो मुझे केवल प्रत्यक्षों का अनुभव होता है, किसी अन्य तथ्य का नहीं। ह्यूम आत्मा को विभिन्न विचारशील प्रत्ययों का समूह मानते हैं। अद्वैत वेदान्त में प्रत्यक्ष को चेतना पर अधिष्ठित मानते हैं।

शंकराचार्य स्पष्ट कहते हैं प्रत्येक व्यक्ति व्यवहारिक जीवन में भी अनुभव करता है कि मैं हूँ। कोई यह अनुभव नहीं करता कि मैं नहीं हूँ : आत्मास्तित्वं प्रत्येति नयाहमस्मीति। यदि कोई व्यक्ति अपने अस्तित्व को स्वीकार न करे तो भी अस्तित्व को अस्वीकार करने वाली आत्मा ही होगी। शंकर ने आत्म तथा अनात्म, विषयी तथा विषय में भेद करते हुए शुद्ध चैतन्य को ही वास्तविक माना है।

चेतना को सदैव विषय युक्त ही माना जाता है। चेतन होने का अर्थ है कि किसी विषय के प्रति चेतन होना। अद्वैत वेदान्त में चेतना ही पारमार्थिक सत्ता है। यही सत्ता ब्रह्म है तथा ब्रह्म सत्य ज्ञानम् अनन्तम् है। विशुद्ध आत्मा सभी प्रकार के भेदों से रहित है। व्यवहारिक स्तर की चेतना में भेद का कारण चेतना का भिन्न–भिन्न विषयों से सम्बद्ध होना माना गया है।

व्यवहारिक स्तर पर ज्ञाता ज्ञेय का भेद किया जाता है। शंकर के अनुसार जिस अहम् को हम अन्तर्निरीक्षण, तर्क अथवा विचार के माध्यम से जानते हैं वह स्वयं चेतना से अध्यस्त है, शुद्ध चैतन्य नहीं है। वास्तविक ज्ञाता अथवा शुद्ध चैतन्य साधारण अर्थ में ज्ञान का विषय नहीं है। बाह्य जगत के विषय विर्वत मात्र है। विशुद्ध चैतन्य की अनुभूति विषयों के निषेध से ही सम्भव है।

अद्वैत वेदान्त सर्वजीववाद नहीं है और न सर्वचेतनवाद है। चेतन का आधार प्राण को माना गया है। शुद्ध चैतन्य विषय रूप में अज्ञेय होते हुए भी अपरोक्षानुभूति से ज्ञेय है। (अवेद्यतेसति अपरोक्ष व्यवहार योग्यत्वम्) अन्तः अनुभूतियों के विषय भले विषयीनिष्ठ होते हैं तथा भौतिक जगत के विषय विषयनिष्ठ होते हैं।

अद्वैत वेदान्त दर्शन पूर्णतः ब्रह्मवादी दर्शन है। ब्रह्म की सत्ता को सर्वोपरि माना गया है। वेदान्त दर्शन के तीन आधार है– उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र, भगवतगीता जिसे प्रस्थानत्रयी कहा जाता है। ब्रह्म और जीव दो तत्व न होकर वरन् एक तत्व है। परमसत् की एकता ही सत्य है। उत्पत्ति अज्ञान से होती है।[1] जीव और जगत की सत्ता का मिथ्या ज्ञान अविद्या का परिणाम है। जीव ब्रह्म का स्वरूप है। अद्वैत वेदान्त में ब्रह्म की सत्ता को प्रमाणित करने के लिए जन्माद्यस्य यतः और सत्य ज्ञानमनन्तं ब्रह्म का प्रतिपादन करते हैं। सृष्टि का अविर्भाव और तिरोभाव ब्रह्म के कारण ही होता है। ब्रह्म के दो लक्षण है तटस्थ लक्षण तथा स्वरूप लक्षण। श्रुतियों में ब्रह्म को सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म कहा जाता है अर्थात् ब्रह्म सत्य, ज्ञान और अनान्दस्वरूप है। ब्रह्म सभी प्रकार के भेदों से रहित विशेष्य–विशेषणाभाव से परे है। तटस्थ लक्षण वस्तु के आगन्तुक तथा परिणामी धर्म होते हैं जबकि स्वरूप लक्षण वस्तु को तात्विक स्वरूप को प्रकाशित करता है। ब्रह्म का तटस्थ लक्षण ब्रह्म के वास्तविक स्वरूप जो कि उसका अपरिवर्तनशीलस्वरूप है, उसको दर्शाता है। तटस्थ स्वरूप में ही ब्रह्म इस व्यवहारिक जगत का निमित्त और उपादान कारण है। शंकराचार्य के दर्शन में ब्रह्म इस जगत का भले ही निमित्त और उपादान कारण हो किन्तु वह जगत में व्यवहारिक दृष्टिकोण से व्याप्त भी है तथा पारमार्थिक दृष्टिकोण से परे भी है। जबकि रामानुज ब्रह्म को इस जगत का निमित्त तथा उपादान कारण मानते हैं तथा जीव और जगत को ब्रह्म का अंश तो मानते हैं किन्तु वे इसमें भेद भी मानते हैं अर्थात् जीव (चित) और जगत (अचित) ब्रह्म के समान नित्य नहीं है। ईश्वर सृष्टि का कर्त्ता है।

अद्वैत वेदान्त में ब्रह्म को सगुण तथा निर्गुण दो रूप माने गए हैं। सगुण ब्रह्म ही ईश्वर रूप में जगत की सृष्टि करता है जबकि निर्गुण रूप ब्रह्म का वास्तविक स्वरूप है। ब्रह्म सच्चिदानंद स्वरूप है। सत्–चित् अनादि ब्रह्म का गुण होकर स्वरूप है। ब्रह्म और जीव वस्तुतः एक है आनुभवकि जगत में ब्रह्म ही जीव कहलाता है। अद्वैत वेदान्त में जीव को ब्रह्मस्वरूप माना गया है। किन्तु जीव का अविद्या से ग्रसित होने से अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान नहीं पाता है। आत्मा और ब्रह्म में अभेद है। आत्मा पारमार्थिक दृष्टिकोण से ब्रह्म है जबकि व्यवहारिक दृष्टिकोण से जीव है। ब्रह्म सर्वोच्च निरपेक्ष तत्व है। यह नित्य स्वयं प्रकाश है तथा अविर्भाव और तिरोभाव से परे है। यह चिन्माज्योति और सर्वसाक्षी है। ज्ञाता और ज्ञेय के भेद से ब्रह्म परे है क्योंकि यह भेद अविद्या जनित है। अविद्या से ग्रसित जीव जब अपनी उपाधियों का परित्याग कर देता है तब जीव को अपने वास्तविक स्वरूप का बोध होता है।

अद्वैत दर्शन के अनुसार सत् वह है जो त्रिकालबाधित हो अर्थात् (त्रिकालाऽबाध्यत्वं)। सत् कुटस्थ, नित्य और अपरिणामी है। असत् जो त्रिकाल की परिधि से परे हो (क्वचिदत्युपाधौ सत्वेन प्रतीत्यनर्ह त्वम् अत्यन्ताऽसत्वम्) जो भी पदार्थ है, वह ज्ञेय, दृश्य, परिच्छिन्न मिथ्या है। वह अविद्या या माया या भ्रम रूप है। अद्वैत दर्शन में भ्रम के दो रूप हैं प्रथम प्रतिभास, द्वितीय व्यवहार। प्रतिभास के अन्तर्गत समस्त व्यक्तिगत भ्रम और स्वप्नादि आते हैं। यह भ्रम और स्वप्न है जिसकी प्रतीति हमें होती है तथा जिसका बोध हमारे लौकिक जगत के ज्ञान से होता है। जबकि व्यवहार के अन्तर्गत समस्त जगत–प्रपच्च या लोक–व्यवहार आता है।

ब्रह्म पुरुष नहीं है जैसा कि सांख्य दर्शन में आत्मा को पुरुष माना गया है। क्योंकि सांख्य दर्शन में पुरुष जो कि आत्म तथा अनात्म के भेद से युक्त होता है जबकि अद्वैत वेदान्त का ब्रह्म इस भेद से परे है।

निर्विशेष और सविशेष

उपनिषदों में ब्रह्म पर और अपर स्वरूप की चर्चा की गई है। परब्रह्म निर्गुण तथा निर्विशेष है, वह अनिर्वचनीय है।[2] जबकि अपर ब्रह्म सगुण तथा सविशेष है। माया से युक्त ब्रह्म ईश्वर रूप में इस जगत का कर्त्ता धर्त्ता है। वह पाप–पुण्य से परे है।[3] ईश्वर ब्रह्म का ही स्वरूप है जीव जोकि अविद्या से ग्रसित होने के कारण स्वयं को ब्रह्म से अलग समझता है और सांसारिक क्लेशों को भोगता है। जीव सांसारिक क्लेशों को आत्म तथा अनात्म के अविवेक के कारण भोगता है।

शंकर ने आत्मा और ब्रह्म की एकता का प्रतिपादन बड़ी दृढ़ता एवं स्पष्टता के साथ बार–बार किया है।[4] ब्रह्म जो कि महत्तम है या जो बृहत्तम है। ब्रह्म परम सत्ता है क्योंकि यह अनन्त रूप से वर्द्धमान है जो निरपेक्ष माना जा सकता है। 'यह आत्मा ब्रह्म है', 'अयमात्मा ब्रह्म'।[5] आत्मा भी ब्रह्म के समान सर्वव्यापक है। सर्वव्यापक होने के कारण आत्मा भी ब्रह्म स्वरूप है किन्तु आत्मा और ब्रह्म दोनों सर्वव्यापक नहीं हो सकते हैं। क्योंकि निरपेक्षता सदा एक ही की होती है। आत्मा और ब्रह्म में भिन्नता न होकर तदात्मय है। तत्वमसि महावाक्य (वह तू है) एवं अहं ब्रह्मास्मि (मैं ब्रह्म हूँ) आदि आत्मा और ब्रह्म के निर्वचन हेतु सत्–चित्–आनन्द पद का प्रयोग किया जाता है। सत्–चित्–अनादि आत्मा और ब्रह्म में एक समान गुण हैं। ब्रह्म ही सृष्टि के निमित्त कारण रूप में ब्रह्म ईश्वर रूप है। ईश्वर रूप में ब्रह्म माया के सत्वगुण से अवच्छिन्न है, पर इसका ईश्वर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। जैसे कोई जादूगर अपने जादू से दूसरों को प्रभावित करता है किन्तु वह अपने जादू से प्रभावित नहीं होता है, वैसे ही ईश्वर अपनी माया की शक्ति से जीव को प्रभावित करती है। शंकर जीव और ब्रह्म के सम्बन्ध को स्पष्ट करने के लिए आभासवाद सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं। ईश्वर तथा जीव ब्रह्म के आभास रूप हैं। मायाजनित ईश्वर ब्रह्म का अध्यास रूप है जबकि जीव अविद्या से ग्रसित होने के ब्रह्म से अलग अविद्यायुक्त जीव कहलाता है।

अद्वैत वेदान्त में आत्मा को नित्य प्रकाश माना गया है। आत्मा और चेतना में अभिन्नता का सम्बन्ध है। रामानुज चेतना को आत्मा का गुण मानते हैं। न्याय–वैशोषिक प्रभाकर चेतना को आत्मा का आगन्तुक गुण मानते हैं। जबकि कुमारिल चेतना को आत्मा के कर्म रूप में स्वीकार करते हैं।

चेतना जीव की तीनों अवस्थाओं जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति में विद्यमान रहता है। जाग्रत अवस्था में बाह्य एवं आन्तरिक विषयों का ज्ञान रहता है। स्वप्नावस्था में आन्तरिक विषयों का ज्ञान होता है इसके विपरीत सुषुप्ति की अवस्था में विषयों के ज्ञान का अभाव रहता है।

मोक्ष प्राप्ति की अवधारणा

अद्वैत वेदान्त में मोक्ष को नवीन प्राप्ति के रूप में नहीं माना जाता है बल्कि यह प्राप्य की प्राप्ति है। जीव अपनी अज्ञानता एवं अविद्या से ग्रसित होने के कारण मोक्ष को अप्राप्त की प्राप्ति मानता है। जीव वस्तुतः ब्रह्म ही है किन्तु अज्ञानता और अविद्या के कारण अपने वास्तविक स्वरूप को जानने के लिए मोक्ष प्राप्ति का प्रयास करता है। आत्मा का शरीर और शरीर का मन से सम्बन्ध बंधन कहलाता है। जीवात्मा के अज्ञान का नाश ब्रह्म ज्ञान से ही संभव है। श्रौतज्ञान से अर्थात् श्रुतिगम्य अपरोक्षानुभव या ब्रह्मज्ञान से माया की आत्यन्तिक निवृत्ति होने पर उसकी नितान्त असत्ता या तुच्छता का बोध होता है, जैसे रज्जु के ज्ञान से सर्प के त्रेकालिक असत्व या तुच्छता का ज्ञान होता है।[6] ब्रह्मसूत्र में यह कहा गया है कि ब्रह्म जिज्ञासा अर्थात ब्रह्मज्ञान की मोक्ष है।

वेदान्त दर्शन में ज्ञान मार्ग को मोक्ष प्राप्ति का मुख्य साधन माना गया है जबकि कर्ममार्ग और भक्तिमार्ग को ज्ञान मार्ग का गौण साधन माना गया है। ज्ञान मार्ग के तीन सोपान माने गए हैं – श्रवण, मनन, मिदिध्यासना। मोक्ष ज्ञान की प्राप्ति के लिए साधन चतुष्टय के अन्तर्गत चार शर्तों का उल्लेख किया गया है–

नित्यानित्य वस्तुविवेक

मोक्ष प्राप्ति के इच्छुक साधक को नित्य और अनित्य वस्तुओं में विवेक करना चाहिए।

इहामूत्रार्थभोगविराग

साधन के मान में इकलोक तथा परलोक के प्रति वैराग होना।

शमदमादिसाधनसम्पत्

शम, दम, उपराति, समाधान एवं ब्रह्म इन छः गुणों को साधक को अर्जित करना चाहिए। मानसिक नियंत्रण श्रम है, इन्द्रियों पर नियंत्रण दम है, विषयवासना से दूर हटाना उपरति है, शंकाओं का निराकरण चित्त को ज्ञान मार्ग में एकाग्र करना समाधान है और गुरु के प्रति श्रद्धा रखना।

मुमुक्षत्व, मोक्ष प्राप्त की इच्छा रखना, मुमुक्षत्व है

वेदान्त दर्शन में मोक्ष प्राप्ति के साधन में श्रवण, मनन निधिय्यासन के अनुसरण से ही जीव को अहंब्रह्मस्मि या अयमात्मा ब्रह्म का बोध होता है। वेदान्त दर्शन में मोक्ष के दो प्रकार माने गए हैं – जीवन मुक्ति और विदेह मुक्ति। जीवित रहते हुए ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति, जीवन मुक्ति है जबकि अशरीरत्व की अवस्था में प्राप्त होने वाली मुक्ति विदेह मुक्ति है, यही वास्तविक मुक्ति है। प्रश्न उठता है कि जीवित रहते हुए मुक्ति कैसे संभव है?

वेदान्त दर्शन में जीवित रहते मोक्ष प्राप्ति की शंका का समाधान करने के लिए अविद्यालेश सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार ज्ञान से अविद्या के आवरण का नाश होता है किन्तु प्रारब्ध कर्मों का अंश बना रहता है और उन्हीं प्रारब्ध कर्मों का अंश भोगने के लिए शरीर बना रहता है। जब जीव प्रारब्ध कर्मों का अंश भोग लेता है तब उसके शरीर का नाश हो जाता है। प्रारब्ध कर्मों के फलों का भोग करने के लिए पश्चात शरीर का अन्त होने पर जीव को विदेह मुक्ति की प्राप्ति होती है। किन्तु जब जीव को जीवत रहते हुए मुक्ति मिलती है जब जीव का जो शरीर होता है जीव को उसकी मिथ्यात्व का बोध होता है मिथ्याज्ञान की निवृत्ति के पश्चात् इस भौतिक शरीर का अन्त हो जाता है।

विदेह मुक्ति जो कि भौतिक शरीर के नष्ट होने पर प्राप्त होती है। इस अवस्था में जीव का ब्रह्म से एकाकार होता है क्योंकि जीव के सूक्ष्म शरीर का नाश हो जाता है। वेदान्त में मोक्ष के जिस स्वरूप को माना गया

है वह अन्य दर्शनों से भिन्न है क्योंकि वेदान्त में तात्कालिक क्रमिक मुक्ति को माना गया है। क्रम मुक्ति में प्रलयपर्यन्त मुक्ति जीव पुनः जन्म लेते हैं तथा मुक्त होते हैं। यह क्रम सपेक्षिक रूप चलता रहता है। किन्तु शंकराचार्य सधोमुक्ति को वास्तविक मुक्ति मानते हैं क्योंकि इस प्रकार की मुक्ति में जीवात्मा का संसार में अवागमन का चक्र समाप्त हो जाता है।

मोक्ष की अवस्था में जीव की वैयक्तिक चेतना का लोप होता है किन्तु आत्मा का सारतत्व का लोप नहीं होता है। मोक्ष की अवस्था ईश्वर और ब्रह्म में एकाकार की अवस्थायें होती हैं। शंकर कर्ममार्ग को मोक्ष प्राप्ति के लिए मुख्य साधन के रूप में स्वीकार नहीं करते हैं क्योंकि कर्मों की उत्पत्ति असाक्त भाव से होती है तथा असाक्त भाव से उत्पन्न कर्म अविद्या जनित होता है। किन्तु जैसा कि वेदान्त दर्शन में जीवन मुक्त को स्वीकार किया गया है जीवात्मा द्वारा जीवित रहते हुए किये गये कर्म अनासक्त भाव से किये जाते हैं। ऐसा कर्म लोक संग्रह के लिए किया जाता है। जीवात्मा कर्मों को करता है किन्तु उनमें लिप्त नहीं होता है।

अदैत वेदान्त में मोक्ष प्राप्ति के साधन के रूप में ज्ञान, कर्म, भक्ति, को साधन रूप में स्वीकार किया गया है किन्तु ज्ञान मार्ग मोक्ष का आसन्न साधन है यद्यपि अन्य वेदान्तियों ने भक्ति को भी मुख्य साधन के रूप में माना है। वेदान्त परिभाषा में यह स्पष्ट कहा गया है – सगुणोपासना चित्तेकाग्रता के द्वारा निर्विशेष ब्रह्म के साक्षात्कार में हेतु है। किन्तु वेदान्त दर्शन में यह ब्रह्म के समान रूप में पाया जाता है।

जीव का बंधन अविद्या कृत है, अतः अद्वैत वेदान्त में अविद्या निवृत्ति मात्र मोक्ष है। अविद्यानिवृत्ति मोक्षः। अविद्या के दूर होते ही और ज्ञानोदय के साथ ही आत्मा अपने नित्य स्वरूप का साक्षात्कार करते ही अपने वास्तविक स्वरूप को जान लेता है। यथार्थ आत्मा वैसे ही स्वतः प्रकाशित होती है जैसे प्रभावी मलिनताओं के छूट जाने पर सुवर्ण में चमक आ जाती है अथवा दिन में छिप जाने पर मेघशून्य रात्रि में तारे प्रकाश देने लगते हैं। अद्वैत वेदान्त में इसे अनेक उपमाओं द्वारा स्पष्ट किया गया है जैसे कोई व्यक्ति अपने कंठ में हार के रहते हुए भी विस्मृति के कारण उसे यत्र तंत्र ढूंढता है, किन्तु विस्मृति समाप्त होने पर उसे अप्राप्त सा प्रतीत होता है।

यह भी स्पष्ट किया गया है भक्ति मार्ग भले ज्ञान हेतु हो किन्तु मोक्ष के हेतु नहीं है। अद्वैत वेदान्त में एक जीववादी तथा अनेक जीववादी जीव के मुक्ति के सम्बन्ध में विरोधी मत रखते हैं। एक जीववादी के अनुसार जीव एक है। अतः अनेक जीव का दिखना भ्रममात्र है। मुक्ति केवल एक जीव को मिलती है जबकि इसके विपरीत अनेक जीववादी के अनुसार जीव अनेक है और प्रत्येक जीव को अपनी मुक्ति का प्रयास स्वयं करना चाहिए।

शोध पत्र का उद्देश्य

मेरे शोधपत्र का उद्देश्य अद्वैत वेदान्त में ब्रह्म का वास्तविक स्वरूप क्या है? किस प्रकार जीव ब्रह्मज्ञान के द्वारा अपने वास्तविक स्वरूप अर्थात् 'अहं ब्रह्मस्मि' की अवधारणा को स्पष्ट करना है तथा अद्वैत दर्शन में शंकराचार्य ने जीवन मुक्ति की जिस अवधारणा को बताया है, उसे अपने शोध पत्र में बताना है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि शंकराचार्य के दर्शन में ब्रह्म के स्वरूप और उसके ज्ञान प्राप्ति की अवधारणा अन्य भारतीय दर्शनों में दी गयी अवधारणा से अधिक स्पष्ट तथा समाचीन है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *शांकर भाष्य ब्रह्मसूत्र 2.1.14*
2. *वही 1.2.24, 1.3.12, 2.1.2, 2.3.12, 2.1.10.11; बृहदराण्यक 2.4.14, 2.1.19, 3.9.27, 4.3.31; छान्दोग्य, 6.2.1; मुण्डक, 3.1.18; केन 1.3.5; तैत्तिरीय, 2.4.11*
3. *वही, 1.2.14.21; ईश 4, 51*
4. *शांकर भाष्य 2.17, शांकर भाष्य छान्दोग्य 6.8.7 आदि*
5. *बृहदारण्यक, 3.4.5, 3.7.3; छान्दोग्य, 8.1.3, 3.13.18; कै0, 3.8; 9, छान्दोग्य, 6.11.3; बृहदारण्यक, 1.4.10, 2.5.11*
6. *तुच्छाऽनिर्वचनीया च वास्तवी चेत्सयौ त्रिधा।*
   ज्ञेया माया त्रिभिर्बोधैः श्रौतयौक्तिकलौकिकैः।।